ये ज़हर तो हमने ही उगला है

उत्तर भारत का एक बड़ा हिस्सा इन दिनों प्रदूषण युक्त घने कोहरे से ढका हुआ है। इसके परिणामस्वरूप देश के कई क्षेत्रों से भीषण सडक़ दुर्घटनाओं के समाचार मिल रहे हैं। अनेक रेलगाडिय़ों के अनिश्चितकाल देरी से चलने की खबरें हैं। शहरों में ट्रिफक जाम के समाचार आ रहे हैं तथा पंजाब के सीमावर्ती क्षेत्रों में हमारे सैनिकों को इस प्रदूषणयुक्त धुंध से जूझते हुए कड़ी व चुनौतीपूर्ण निगरानी करनी पड़ रही है। पंजाब,दिल्ली तथा उत्तर प्रदेश में शिक्षण संस्थानों को इन्हीं परिस्थितियों के मद्देनज़र बंद कर दिया गया है। उधर दिल्ली में वायु प्रदूषण खतरनाक स्तर से काफी अधिक हो जाने के कारण दिल्ली में होने वाले निर्माण कार्यों पर रोक लगाते हुए ट्रकों के प्रवेश पर पाबंदी लगा दी गई है। मैट्रो तथा दिल्ली नगर निगम ने निजी वाहनों के परिचालन को कम करने के उद्देश्य से मैट्रो व स्थानीय बसों के फेरे और अधिक बढ़ाने का निर्णय किया है। कुल मिलाकर भटिंडा में आठ स्कूली बच्चों व एक शिक्षिका समेत एक दर्जन से अधिक लोगों के विभिन्न हादसों में मरने की खबरें हैं। लाखों लोग इसी ज़हरीले प्रदूषण की चपेट में आकर विभिन्न बीमारियों का शिकार हो चुके हैं। ऐसे में एक बार फिर इस बात पर चिंतन-मंथन करने की ज़रूरत महसूस की जा रही है कि बड़ी ही ईमानदारी व पारदर्शिता के साथ हम स्वयं यह सोचें की इन परिस्थितयों का ज़िम्मेदार कौन है, इनसे निपटने के क्या उपाय किए जा सकते हैं,क्या शासन-प्रशासन व अदालतों के फैसलों मात्र से हमें इस प्रकार की आपदाओं से निजात मिल सकेगी और दम घुटने वाली तबाही का यह खौफनाक सिलसिला आखर कब तक जारी रहेगा ?

सर्दी अथवा शीत ऋतु में धुंध या कोहरे का छा जाना कोई नई बात नहीं है। हिमाचल प्रदेश व कश्मीर के सेब उत्पादक क्षेत्रों में तो किसान घनी धुंध की दुआएं सिर्फ इसलिए मांगते हैं ताकि घनी धुंध में सेब की फसल अच्छी हो सके। परंतु वह धुंध पूर्णरूप से प्राकृतिक व प्रदूषणमुक्त धुंध हुआ करती है न कि मैदानी क्षेत्रों की वर्तमान फैली हुई ज़हरीली धुंध। गौरतलब है कि कई समाचार पत्रों ने तो उत्तर भारत में फैली इस प्रदूषित धुंध को 'गैस चैंबर' का नाम तक दे दिया है। पर्यावरण पर नज़र रखने वाले विशेषज्ञों का मानना है कि भारतवर्ष में प्रदूषण का स्तर 19 अक्तूबर अर्थात् दीपावली के बाद अचानक तेज़ी से बढ़ गया था। अब ज़रा याद कीजिए उच्चतम न्यायालय के उस आदेश को जिसमें माननीय न्यायालय ने दिल्ली राजधानी क्षेत्र में दीपावली पर आतिशबाज़ी की बिक्री पर रोक लगा दी थी। इसके बाद इस अदालती फैसले के विरुद्ध बाकायदा एक ऐसा गिरोह सक्रिय हो उठा था जिसे अदालत के इस फैसले में कोई जनहितकारी कदम दिखाई देने के बजाए यह फैसला सांप्रदायिकतावादी निर्णय नज़र आने लगा। लोग अदालत के फैसले पर उंगलियां उठाने लगे कि शब-ए-बारात,गुरुपर्व या नववर्ष पर छूटने वाले पटाखों पर पाबंदी नहीं तो दीपावली के पटाखों पर पाबंदी क्यों? और इन शक्तियों के सक्रिय होने से उर्जा प्राप्त करने वाले पटाखा उत्पादन व पटाखा क्रय-विक्रय व्यवसाय से जुड़े लोग भी सडक़ों पर प्रदर्शन करते देखे गए। इनकी फरियाद यह थी कि हम आतिशबाज़ी नहीं बेचेंगे तो रोटी कहां से खाएंगे?

आज जबकि पर्यावरण विशेषज्ञ यह मान चुके हैं कि भारतवर्ष में बढ़ते वायु प्रदूषण में दीपावली के दिनों छोड़े गए पटाखों द्वारा उत्पन्न प्रदूषण का बड़ा योगदान है ऐसे में उन जोशीले आतिशबाज़ी समर्थकों के पास इस बात का क्या जवाब है जिन्होंने सुप्रीम कोर्ट के आदेश की धज्जियां उड़ाते हुए तथा उसके आदेश को ठेंगा दिखाते हुए सुप्रीम कोर्ट के मुख्य द्वार पर ही आतिशबाज़ियां छुड़ाकर उसके आदेश की खिल्लियां उड़ाई थीं? रही-सही कसर उन किसानों ने पूरी कर दी जो फसलों की कटाई के बाद बचा हुआ कचरा अर्थात् पराली व भूसा आदि खेतों में ही आग लगा कर नष्ट कर देते हैं। पर्यावरण विभाग तथा अदालतों द्वारा पहले ही खेतों में फसल के अवशेष जलाने को प्रतिबंधित किया जा चुका है। परंतु अनेक

किसान अब भी वही सुगम रास्ता अपनाते आ रहे हैं यानी खेतों में आग लगाकर पराली को नष्ट करना। और कृषि प्रधान देश में जहां देश का अधिकांश भाग खेती का व्यवसाय करता आ रहा है वहां इस प्रकार ज़हरीला प्रदूषण फैलाना निश्चित रूप से नुकसानदेह भी है और चिंताजनक भी। क्या यह परिस्थितियां हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए बाध्य नहीं करतीं कि बावजूद इसके कि हमारे ही परिजन या हमारे ही समाज के हमारे ही भाई-बंधु या देशवासी यदि भुक्तभोगी या मकतूल हैं तो इन हालात के ज़िम्मेदार अर्थात् कातिल भी हम ही हैं ? केवल दीपावली के पटाखे या खेतों में जलने वाली पराली ही नहीं बल्कि सडक़ों पर उतरने वाली नित्य नए लाखों वाहन,उद्योगों से उठने वाला अनियंत्रित प्रदूषित धुंआ,बढ़ती जनसंख्या,इसके परिणामस्वरूप फैलने वाली गंदगी व कचरा,नालियों-नालों व नदियों में बढ़ता प्रदूषण का स्तर व दुर्गंध,सरकारी व गैर सरकारी स्तर पर प्रतिदिन कचरा व कूड़ा-करकट जलाया जाना आदि तमाम परिस्थितियां भी इन हालात की ज़िम्मेदार हैं और इन सभी में 'कातिल' की भूमिका में हम ही खड़े दिखाई दे रहे हैं।

हमारे देश में इस व्यवस्था से निपटने के जो उपाय किए जाते हैं उनमें भी दोहरापन देखने को मिलता है। उदाहरण के तौर पर स्विटज़रलैंड के ज्यूरिख़ शहर में जब ऐसी स्थिति पैदा हुई तो वहां कार पार्किंग की जगह कम करने की घोषणा कर दी गई। यह खबर सुनकर अनेकानेक लोगों ने अपनी कारें घरों से बाहर इसी डर से नहीं निकाली कि पार्किंग में स्थान न मिलने के कारण उन्हें परेशानी उठानी पड़ सकती है। उधर हमारे देश में जहां दिल्ली में ट्रकों के प्रवेश पर प्रतिबंध घोषित किया गया है वहीं कार पार्किंग कम करने के बजाए इसका पार्किंग शुल्क बढ़ाने की घोषणा की गई है। गोया वाहन चालक कुछ पैसे ज़्यादा देकर वातावरण में ज़हरीला प्रदूषण फैला सकता है। दुनिया के कई विकसित व विकासशील देशों ने उद्योगों में लगी चिमनियों में सख्ती के साथ फ़िल्टर्स लगवाए हैं ऐसा करने से नब्बे प्रतिशत तक ज़हरीला प्रदूषण कम हो गया है। परंतु हमारे देश में जहां की सरकारें उद्योगपतियों के हाथों का खिलौना बनी हों वहां ऐसी कोई व्यवस्था नहीं। दुनिया के विकसित व विकासशील देशों में जहां स्थायी रूप से परिवहन में ऑड-ईवन का तरीका अपनाया गया है वहां दिल्ली में जब कभी केजरीवाल सरकार यह

फैसला लेती है तो उनके विरोधी उनका मज़ाक उड़ाते हैं और राजनैतिक लाभ उठाने के लिए उनपर टूट पड़ते हैं। कई देशों में ऐसी परिस्थितियों में सार्वजनिक वाहनों को नि :शुल्क चलाया जाता है जबकि हमारे देश में ऐसी परिस्थिति में वाहन चालक मनमाने तरीके से किराया भी बढ़ा देते हें।

उपरोक्त परिस्थितियां ऐसी हैं जो निश्चित रूप से हमारे ही द्वारा पैदा की गई हैं और हम ही इन परिस्थितियों का खमियाज़ा भी भुगत रहे हैं। परंतु यदि कातिल व मकतूल होने के साथ-साथ हम ही मुंसिफ की भूमिका भी स्वयं ही अदा करते रहेंगे तो इन परिस्थितियों से हमें हमारा ईश्वर भी बचा नहीं सकता। क्योंकि ऐसा कर हम सामूहिक आत्महत्याओं की ओर आगे बढ़ रहे हैं। आज अस्पतालों में बढ़ती मरीज़ों की संख्या,सांस व दमे जैसी बीमारियों के बढ़ते रोगी इस बात का प्रमाण हैं कि हम अपने ही रचे चक्रव्यूह में खुद ही फंस चुके हैं। सोने में सुहागा हमारी खान-पान की वह वस्तुएं हैं जिन्हें अप्राकृतिक तरीके से ज़हरीली प्रक्रिया से तैयार कर बाज़ारों में बेचा जा रहा है। ऐसे में हमारी निजात का तरीका क्या है यह हमें स्वयं सोचना है।
निर्मल रानी